आखर हिंदी पत्रिका; e-ISSN-2583-0597 खंड 6/अंक 1/मार्च 2026

Received: 13/03/2026; Revised: 18/03/2026; Accepted: 24/03/2026; Published: 28/03/2026

स्त्रियों का भाषिक संसार : एक विश्लेषण

डॉ. रेनू यादव
असिस्टेंट प्रोफेसर,
भारतीय भाषा एवं साहित्य विभाग
गौतम बुद्ध विश्वविद्यालय
यमुना एक्सप्रेसगौतम बुद्ध नगर ,वे-,
ग्रेटर नोएडा (.प्र.उ) 312 201 –
ई-मेल- renuyadav0584@gmail.com,
renu@gbu.ac.in

डॉ. रेनू यादव, स्त्रियों का भाषिक संसार : एक विश्लेषण, आखर हिंदी पत्रिका, **खंड 6/अंक 1/मार्च 2026**,(101 -114)

https://doi.org/10.5281/zenodo.19500305

This work is licensed under CC BY-NC 4.0

प्रस्तावना :

साहित्य में भाषा एवं संवेदना के प्रयोग से लेखक का उद्देश्य एवं मानसिक संरचना का आभास अनायास हो जाता है । लेखन का उत्सर्ग भाषा की जटिलता अथवा पांडित्य,प्रदर्शन में नहीं होता- बल्कि अभिव्यक्ति की स्पष्टता गहराई एवं प्रभावकारी कारकों के स्थायित्व पर निर्भर ,करता है । भाषिक दृष्टि से कमज़ोर किंतु अभिव्यक्ति की संचरणशीलता पाठक के हृदय में ज्वार-ला सकती है और वही ज्वार भाटा-भाटा रचना की स्थिरता और अस्थिरता निर्धारित करती है। यह कहना गलत न होगा कि हाशिए पर खड़े समाज का साहित्य ज्वार ,स्त्री ,जिसके परिणामस्वरूप आज दलित ,भाटा लाने में पूर्णतः समर्थ हुआ है-आदिवासी/ जनजातीय प्रमुख केन्द्र बन गए हैं । थर्ड जेंडर आदि सभी वर्ग चिंतन के ,जिसके कारण सिर्फ़ साहित्यिक-जगत नहीं बल्कि समाज भी इससे प्रभावित हुए बिना नहीं रह सका ।

हाशिए पर खड़ी स्त्रीसमुदाय- ने 'पर्सनल इज पॉलिटिक्स' के तहत अपनी व्यक्तिगत एवं सामाजिक समस्याओं को संवेदनात्मक भाषा में पिरोकर अपने अधिकारों स्वतंत्रता एवं सद्भावना जैसे ,समानता) प्रजातांत्रिक मूल्य आदि(की माँग करते हुए अपनी अस्मिता स्थापित करने हेतु निरंतर प्रयासरत् रही हैं। स्त्री की विशिष्ट प्रकृतिगत अनुभूति एवं जातिय स्मृतियों पर आधारित अपनी एक भाषिक रवानी हैजो , समाज में आवश्यकतानुसार ज्वारभाटा भी ला- सकती हैं और ले आयी हैं । जो शनैः शनैः रिसरिसकर -

वर्चस्ववादी सत्ता की दीवारों में सीलन भी पैदा कर देती हैऔर उन दीवारों से रूढ़ विचारों की पपड़ियाँ निकलने लगती हैं। ये सत्य है कि पुरुषवर्चस्ववादी सत्ता द्वारा रचित इतिहास में स्त्रियों को वह स्थान नहीं मिल पाया जिसकी वे हक़दार थीं। ,किंतु यह भी सत्य है कि हिन्दी साहित्य के इतिहास के लिए जो कार्य आचार्य रामचन्द्र शुक्ल ने किया है वही कार्य आधी आबादी के लिए सुमन राजे ने ,'हिन्दी साहित्य का आधा इतिहास' लिखकर किया है।

स्त्री जब कलम उठाती है तो सर्वप्रथम पीड़ा लिखती हैछटपटाह ,ट लिखती है। फिर उस पीड़ा और छटपटाहट को स्वानुभूति से सर्वानुभूति में समाहित करते हुए संघर्ष के स्तर पर व्यापक बना देती हैजहाँ , श्चात् वह इच्छानुसार प्रेम लिखती है और संसार की समस्त स्त्रियों का दर्द एक समान हो जाता है। तत्प जीवन लिखती है। इस प्रकार साहित्य और समाज का रिश्ता स्त्री के लिए पीड़ा का रिश्ता बन जाता है जिसे व्याख्यायित करती है उसकी भाषा। सदियों से सहती आयी जेंडर के आधार पर उपेक्षा और असहनीय दृष्टि के परिणामस्वरूप वह अपनी- भाषा में धार भी देती है। यह कहना ग़लत नहीं होगा कि स्त्री-भाषा स्त्रीपीड़ा का- विधिवत् दस्तावेज है।

स्त्री का भाषिक संसार :

स्त्रियाँ भाषा की परिभाषा अपनी कोमल प्रवृत्ति के अनुसार गढ़ती हैं। डॉभोलानाथ तिवारी की . परिभाषा के अनुसार भाषा को'यादृच्छिक ध्वनिप्रतीकों की व्यवस्था-' कहने के बजाय स्त्री विमर्शीकार- अनामिका लिखती हैं ,"भाषा का सार है संवादभाषण नहीं। दोनों होठों की अस्मिता बरकरार रखने का , नाम है भाषा"।

- *अनामिका .28 .पृ ,कविता में औरत –*

'स्त्री– लेखन- एक उत्तर आधुनिक एकांत की तलाश' नामक लेख में सुधीश पचौरी ने स्त्रीभाषा की - ,उत्पत्ति और विकास पर विचार करते हुए लिखते हैं"फ्रॉयड ने बहुत पहले 'ईडिप्स' ग्रंथि को पुरुष व्यवहार में खोजा थाउसकी संरचनागत विशेषता बताते हुए रोलां बार्थ ने बताया कि ईडिप्स ग्रंथि तथा वृतान्त का , गहरा संबंध होता है। पुरुष केन्द्रित वृतान्त के केन्द्र में 'शिश्न केन्द्रिकता' है जो स्त्री को अक्रिय या निष्क्रिय सत्ता बनाती है। फ्रॉयड के व्याख्याकार लाकां ने इस शिश्न केन्द्रिकता को भाषा की संरचना में देखा और बताया भाषा की संरचना में परंपरागत शिश्न केन्द्रिता ही पुरुष वर्चस्व को सिद्ध करती है। दरअसलइसी , विमर्श को जन्म दिया जो भाषा के भीतर मौजूद पुरुषवर्चस्व को चुनौती देते हुए -सिद्धांत ने बाद में ऐसे स्त्री एक ऐसी भाषा की तलाश करता था जो शुद्धतम स्त्री अनुभवों को बताए। एलेन शूवाल्टर ने इसे ही लेखन में स्त्री काएकान्त कहा। ऐसा एकान्त जहाँ पुरुष की भाषा उपस्थित न हो सके। यहीं से स्त्रीकेन्द्र की - अवधारणा परिपक्व हुई।"

- *पचौरी .49 .पृ ,देह के विमर्श-स्त्री .सुधीश ,*

यह ध्यातव्य है कि भाषा विज्ञान की दृष्टि से स्त्री-पुरुष की अलग-अलग भाषा नहीं हो सकती अथवा कोई ऐसी लक्ष्मण रेखा नहीं है जिसे खींच दिया जाय कि यह पुरुष की भाषा है और यह स्त्री की ! अंग्रेजी के साहित्यकारों का मानना है कि अंग्रेजी साहित्य में स्त्रीपुरुष की भाषा में- कोई अंतर नहीं दिखाई देतायदि , चले तो यह पता लगाना मुश्किल हो साहित्यकारों का नाम न पताता है कि साहित्यकार पुरुष है अथवा स्त्री। किंतु हिन्दी साहित्य पढ़ने पर अनेक ऐसी महिला रचनाकार हैं जिन्हें पढ़ने के पश्चात् स्पष्ट ज्ञात होता है कि यह भाषा स्त्री की ही है। जुलीया क्रिस्तेबा भाषा को रलगल प्रक्रिया मानती हैं (प्रॉसेस जैनरेटव)। इरिगेरे ने यौन संवेदनाओं का सीधा संबंध भाषिक संवेदनाओं से माना है और सिक्सू ने शब्दों की

मितव्ययिताओं का संबंध लिबिडनल इकोनॉमी से माना है।)*अनामिका (.44 .पृ .कविता में औरत* .तथा समाजभाषावैज्ञानिकों ने तो स्त्री भाषा को देह भाषा भी कह दिया है।-

हिन्दी साहित्य के इतिहास में मीराबाईसुभद्रा कुमारी चौहान तत्पश्चात् शकुन्त ,महादेवी वर्मा , तेजी ,चन्द्रप्रभा राणा ,रमणिका गुप्ता ,गगन गिल ,कुसुम अंसल ,मणिका मोहिनी ,कीर्ति चौधरी ,माथुर उषा ,इन्दू जैन ,सुनीता जैन ,प्रभा खेतान ,कुसुम कुमार ,ग्रोवर राजे सक्सेना ,कमल कुमार ,सुषम वेदी , नासीरा शर्मा आदि अनेक नाम महिला ,मैत्रेयी पुष्पा ,अनामिका ,कात्यायनी ,सुधा ओम ढ़ींगरा साहित्यकारों के आते हैं जिनकी अलग अलग भाषिक विशेषताएँ हैं।

सार्वभौमिक स्तर पर देखा जाय तो भाषा को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है पहला – स्वावभाविक भाषा और दूसरा मनोसामाजिक संरचना पर आधारित भाषा। जिस भाषा को कवि या लेखक क्षेत्र तथा परिवेश से अनायास ही ग्रहण कर लेता है अथवा उसे ग्रहण करने में ,समाज ,अपने परिवार लोकगीतों तथा मिथक ,लोकोक्ति ,मुहावरा ,सम्पदा-करना पड़ता है और वह भाषा शब्द विशेष प्रयत्न नहीं उसे स्वाभाविक भाषा कहते हैं। तथा मनोसामाजिक ,आदि के रूपों में स्वतः ही व्यवहृत होने लगती है परिवेश और कवि के ,काल ,संरचना पर आधारित भाषा के अंतर्गत वे भाषाएँ आती हैं जिसमें देश मानसिकता के अनुसार कुछ विशिष्ट शब्द सम्पदा का चयन होता हैजिसे चाहकर भी कवि स्वयं से अलग , नहीं कर पाता तथा भाषा उसकी शैली के साथ समन्वित हो कर विशिष्ट बन जाती है।

हाशिए पर खड़े साहित्यकारों की भाषा मनोसामाजिक संरचना पर आधारित मानी जा सकती है , -समें से चयन और विचलन के आधार पर स्त्रीजिभाषा को तीन स्तरों पर देखा जा सकता है-जो कि पुरुष , भाषा से भिन्न परिलक्षित होता है -

1. अनुप्रयोग के स्तर पर
2. शब्द चयन के स्तर पर (सम्पदा-शब्द)
3. शैली के स्तर पर

1. अनुप्रयोग के स्तर पर-

स्त्रीपूर्व समाज में पितृसत्ता भाषा को समझने से-त्मकबोध से उत्-पन्न दोहरे मापदंड को समझना अतिआवश्यकता है। एक ही घर में लड़के अलग संस्कार-लड़की दोनों को अलग-प्रदान करनापुरुष , विकसित वर्चस्ववादी सत्ता द्वारा निर्धारित मापदंडों के अनुसार स्त्री में स्त्रियोचित् और पुरुष में मर्दाना गुण प-करना हमारे मनःस्थिति में शक्कर ानी की भाँति हैजिससे साहित्यकार भी अछूते नहीं रहे। कबीरदास , जब ज्ञानाश्रयी शाखा के सिद्धांतों के अनुसार स्वयं को पत्नी मानकर भक्ति करते हैं तब पूर्णतः समर्पितस्त्री की भूमिका में होते हैं ,"दुलहिन गावहु मंगलाचार। / तत रति करि मै मन रति करिहौ पंच तत्त बराति ॥ / रामदेव मोरे पाहुल आये हौ जौबन मदमाती ।।" (*शर्मा .पृ .हिन्दी साहित्य युग और प्रवृत्तियाँ .शिवकुमार , 150)* किंतु जब वे समाज सुधारक पुरुष के रूप में आते हैं तब पितृसत्ता का सशक्त प्रतीक बन कर उभरते हैं । "नारी की झाँई परत "अंधा होत भुजंग ,(*शर्मा138 .पृ .हिन्दी साहित्य युग और प्रवृत्तियाँ .शिवकुमार ,)* कहते हुए वे तनिक भी संकोच नहीं करतें। यही नहीं, अग्निपरीक्षा के पश्चात् राम को क्षमा कर उनके साथ अयोध्या लौटने वाली सीता को देवी बनाकर पूजने वाले तुलसीदास "महावृष्टि चलि फूटि किआरीं। जिमी सुतंत्र भएँ बिगरहीं नारीं"*15) क/4) (तुलसीदास640 .पृ ,रामचरित मानस .)* का उल्लेख करते हुए कतई अपने ग्रंथ पर पुनर्विचार नहीं करतें। जयशंकर प्रसाद कामायनी में श्रद्धा को सशक्त नारी के रूप में प्रस्तुत करने की इच्छा रखते हुए प्रेम में वस्तु के रूप में तथा कामायनी के अंत में गर्भावस्था की स्थिति में उसे छोड़ जाने वाले महर्षि मनु की चेरी बना कर प्रस्तुत कर देते हैं। श्रद्धा से अधिक बौद्धिक एवं शासन में पारंगत इड़ा को भी मनु की ही खोज में निकलना पड़ता है। यह घटनाएँ जयशंकर प्रसाद की दृष्टि में स्त्रीमनोभावों -

को समझ न पाने की चूक को दर्शाता है ।सरोज स्मृति लिखने वाले निराला का पुत्री ,प्रेम तो सर्वविदीत है- ,साथ ही सांकेतिक ही सही पत्नी से अमूल्य प्रेम स्पष्ट झलकता है तथा वे कटु आलोचनाओं को झेलकर स्वयं हीन महसूस करते हैं परंतु कुकरमुत्ता में पूँजीपतियों का विरोध करते हुए "पैर सर रखकर व' पीछे को भगा / औरत की जानिब मैदान यह छोड़कर" *(निराला पृ .रामविलास शर्मा .संपा .रागविराग .सूर्यकांत त्रिपाठी ,) 145कुकुरमुत्ता(* कहना पितृसत्तात्मक विचारधारा की ही देन है । कविता में क्रांति ले आने वाले धूमिल पटकथा कविता में "मैंने जिसकी पूँछ / उठायी है उसको मादा / पाया है।" लिखते हुए तनिक भी नहीं हिचकते । अर्थात् सदियों से वर्चस्ववादी सत्ता की छाया से स्त्रीसंवेदना से पूरित होने वाले- पुरुष साहित्यकार अछूते नहीं रहे हैं। ऐसे समय में स्त्रीचिंतन- की सही समझ विकसित होने से पूर्व स्त्री सत्ता से क्षुब्ध तो थी मुक्ति की कोशिश भी करती ,थी, परंतु वह पितृसत्तात्मक जकड़न से मुक्त नहीं हो पायी थी ।

इसका प्रत्यक्ष प्रमाण स्त्री द्वारा रचित काव्यआत्मकथाओं आदि साहित्यिक ,उपन्यास ,कहानियाँ , विधाओं में समयानुसार दृष्टिगत होता है। जब भक्तिकाल में मीराबाई ने"मेरा पिया मेरे हीय बसत हैना , कहुँ आती जाती")*वंशी (73 .पृ .संत मीराँबाई और उनकी पदावली .संपा ,बलदेव ,*कहा था तब उस समय अपने राजमहल में विद्यमान समस्याओं और संकटों का वर्णन करते हुए पति के रूप में ईश्वर को प्राप्त करना चाहती थींपत्नी का ही -मर्यादा की कसौटी में पति-यह स्वाभाविक भी था। क्योंकि उस समय नैतिकता , रिश्ता उचित एवं मयार्दाशील माना जाता था और इसी रिश्ते के साथ स्वयं को दासी भी संबोधित करती हैं । वे विद्रोही होते हुए भी मर्यादा में रह कर प्रेम की पराकाष्ठा पर पहुँचती हैं। कदाचित् प्रेमी अथवा सखा अथवा अन्य कोई संबोधन एक स्त्री के लिए मर्यादानुकूल न होता। जबकि उसी समय में सूर कृष्ण को सखा संबोधित कर सकते थे और गोपी कृष्ण के माध्यम से मर्यादा का उल्लंघन कर सकते थे ! वहीं दूसरी ओर कबीर और तुलसी ने पतिव्रता पत्नी को ही सम्मान दियामर्यादा का उल्लंघन करने वाली स्त्रियों की कड़े , शब्दों में निन्दा की है ।इसी प्रकार छायावाद में प्रसाद निराला के ,पंत ,काव्यों में कोमल कमनीय स्त्री- लावण्य के बीच परंपरागत लीक से हटकर जीवन जीने वाली महादेवी वर्मा का विद्रोह भी एक निश्चित पूर्ति वे-दायरे में है। किंतु यह भी ध्यातव्य है कि इस बात की क्षति'श्रृंखला की कडियाँ' में करती हैं और स्त्री को उच्छृंखल होने से बचाती भी हैं । महादेवी वर्मा, माखनलाल चतुर्वेदी तथा मैथिलीशरण गुप्त की समकालीन कवयित्री सुभद्रा कुमारी चौहान का अपने निजी जीवन में परंपरासंस्कारों से विद्रोह- करना सराहनीय है किंतु जब वे ,"खूब लड़ी मर्दानीवह तो झाँसी वाली रानी है ," *)http://www.milansagar.com/kobi/kobi-subhadrakumchauhan.html(* लिखती हैंतब वे भी , वर्चस्ववादी सत्ता की मानसिकता से प्रभावित होकर ही'मर्दानी' शब्द का प्रयोग करती हैंक्योंकि मर्द ही , इसलिए स्त्री की वीरता की तुलना मर्द ,वे ही युद्ध करते थे ,वीर हुआ करते थेसे करना स्वाभाविक था। किंतु जब कीर्ति चौधरीमणिका मोहिना आदि महिला रचनाकारों ने पुल्लिंग शैली में ,शकुन्त माथुर , रचनाएँ करना आरंभ किया तब पुरूषवर्चस्ववादी सत्ता स्वीकार नहीं पाता।

इन सबके बावजूद के बाद 75-1970लेखिकाओं ने मानवीयता की कसौटी पर खुद को कसते हुए यह स्वीकार किया कि उन्हें पहले स्वयं को मानव मानना होगा फिर किसी अन्य की दृष्टि में मानव रूपी भाव आयेगा। हालांकि शुरूआती दौर का आक्रोश स्वाभाविक ही था। मन की गहराइयों में सदियों से भरे परत दर परत अपराधलामुखी बन जाना स्वाभाविक हबोध का ज्वा-ी था। Stephen Hawking ने सच ही कहा है ,"Quiet People have the loudest minds." *(https://www.goodreads.com/quotes/469784-quiet-people-have-the-loudest-minds)* अतः 'न रहेगा बाँस न बजेगी बाँसूरी' का विगुल बजाना मानवीयता के लिए परिवर्तन रूपी युद्ध का आवाहन ही समझना चाहिए था। गगन गिल की आक्रोशभरी कविता "बच्चेतुम अपने घर जाओ , / घर कहीं

नहीं है ? / तो वापस कोख में जाओ / माँ की कोख नहीं है ? / पिता के वीर्य में जाओ ? पिता कहीं नहीं है / / तो माँ के गर्भ में जाओ तुम गर्भ का अंडा बंजर /? / तो मुन्ना झर जाओ तुम / उसकी माहवारी में / जाती है जैसे उसकी / इच्छा संडास के नीचे वैसे तुम भी जाओ // लड़की को मुक्त करो अब / बच्चे, तुम अपने घर जाओ" । *(30 .पृ .एक दिन लौटेगी लड़की .गगन ,गिल)* - अथवा रमणिका गुप्ता की ललकार "तुम्हारे मुखौटे नोच लूँगी/ चेहरे खरोंच दूँगी / होंठों से सिली मुसकानें उधेड़ दूंगी / ललाट पर सटे भाग्य उखेड़ दूंगी / हाथों से दंभ के दंड छीन लूंगी / हावों से अधिकार की गंध खींच लूंगी / आँखों में चमकते आन के आइने फोड़ दूंगी / और तेरी आकांक्षाओं में छिपे शान और मान के पैमाने तोड़ दूंगी"*(11 .पृ .खूंटे .रमणिका ,गुप्ता)* - आदि आक्रोशात्मक विचारों का मूल न तो एक दिन में बना है और न ही कुछ दिनों में शांत होने वाला है। समाज द्वारा निर्धारित मानदंड़ों में स्त्री का 'पेसिव' होना स्त्री को पराधीनता के लिए बाध्य करना ही तो है। ऐसी स्थिति में वह अपनी व्यथाकथा का सूत्र किसी निरा कोरी कल्पना के आधार पर न गढ़कर अपनी - आत्मकथा आदि साहित्यिक विधाओं में पिरोकर ,उपन्यास ,कहानी ,जातीय स्मृत्तियों के आधार पर काव्य यथार्थ और अनुभूति के संगम मे ं गोते लगाती है। प्रेम हो या देहराजनीति हो अथवा ,श्रम हो या अर्थ , घरेलू जीवन आदि समस्त क्षेत्रों में अपनी सम्पूर्णता को बेबाक तरिके से व्याख्यायित करती है । जब कवयित्री ममता कालिया'खांटी घरेलू औरत' में कहती हैं-

"आज चारपाई के चौसठ इंच
हमारे जीवन की गति
बाँध गये हैं बंदीगृह से" ।

- *कालिया.45 .पृ .खांटी घरेलू औरत .ममता ,*

या फिर नेहा शरद के शब्दों में -

"मन मिले ना मिले
हर नये दिन के डर से
हर रात की बात माननी है"

- *शरद.30 .पृ .तक ख़ुदा से ख़ुद .नेहा ,*

दोनों ही कवयित्रियाँ स्त्री के वैवाहिक जीवन के उस भयावह विडम्बना को व्यक्त कर रही हैं जहाँ स्त्री सबसे अधिक सुरक्षित मानी जाती है तथा उसपर वैधानिक तौर पर शारीरिक संबंध बनाने के लिए अनुमति की मुहर लगी होती है। साथ ही वह उसके पीछे छिपे वर्चस्ववादी सत्ता और सत्ता से उत्पन्न उन विवशताओं को व्यक्त कर रही हैं जो उसे सामाजिक एवं पारिवारिक बंदीगृह में बंदी बनाने के लिए विवश कर रहे होते हैं अथवा हर रात उसे हमसफ़र के साथ हमबिस्तर होने के लिए मजबूर कर रहे होते हैं। कुछ ही दिन पहले कोर्ट ने यह फैसला सुनाया था कि विवाह में जबरदस्ती संबंध बनाने को रेप नहीं माना जाएगा ,जबकि एक सर्वेक्षण के अनुसार ,"भारत में प्रत्येक सात में से एक महिला वैवाहिक बलात्कार की शिकार होती है" ।

- *गृहलक्ष्मीक्यों बन जाता है जीवनसाथी ही) .21 .पृ .2008 .पृ ,जनवरी .संपाः तबस्सुम . (दामिनी – बलात्कारी*

यह तुफ़ान समाज की ऐसी हकीकत है, जो महिला रचनाकारों की रचनाओं में ही प्रस्फुटित होंगी। ऐसा नहीं है कि इन मुद्दों को पुरुष लेखकों ने कभी अपने लेखन या कविता का विषय नहीं बनाया है किंतु , सहानुभूति और स्वानुभूति की भाषा में अंतर आ जाना स्वाभाविक है । मृदुला गर्ग के उपन्यास 'कठगुलाब'

की नायिका स्मिता अपनी इच्छा से मनोचिकित्सक जिम से विवाह करती है, किंतु सबकी बातें समझने वाला जिम के लिए स्मिता का प्रेम उसके लिए किसी प्रेक्टिकल लैब से कम नहीं ! और "पूरी स्थिति पर मन-ही-मन हँसकर, वह ...बहुत कुछ, झेल लेती अवमाननापूर्ण व निर्मम; अगर जिम बराबर उससे बोलने की माँग न करता रहता। वह चाहता था- सबको, स्नेह, प्यार, विश्वास, जरूरत, अपनत्व, दोस्ती, सन्तोष, शब्दों में अभिव्यक्त किया जाए। वह नहीं कर पाती तो उसके पास एक ही विकल्प बचता। सेक्स। उसकी हर 'चुप' उससे, उसकी देह को भोगने का नया तरीका ईजाद करवा देती। पहले से ज्यादा अपमानजनक, तिरस्कारपूर्ण और अशालीन।"

– *मृदुला गर्ग, कठगुलाब, पृ. 53*

यह बलात्कार सिर्फ शारीरिक ही नहीं बल्कि मानसिक रूप से होता है, क्योंकि पुरुष के लिए प्रेम और सेक्स ज़िन्दगी का महज़ एक हिस्सा है परंतु स्त्री के लिए सम्पूर्ण जीवन, जिसे वह अपनी आत्मा से जोड़कर देखती है। इसीलिए वह दैहिक यातना को भूल भी जाती है किंतु मानसिक यातना पूरे जीवन नहीं भूल पाती। सुधा ओम ढ़ींगरा की कहानी 'क्षितिज से परे' में नायिका सारंगी को उसका पति सुलभ उच्च शिक्षा में पारंगत होते हुए भी उसे सदैव "बेवकूफ" (*सुधा ओम ढींगरा, कौन-सी जमीन अपनी, पृ. 83*) कह कर उसे हीन महसूस करवाता है। सारंगी हीन ग्रंथि के कारण हरसंभव अपने आपको बेहतर बनाने के प्रयास में परफेक्ट वूमेन बन जाती है, लेकिन उसे पता ही नहीं होता कि सुलभ पौरूष के दंभ और ईर्ष्या के कारण उसे हीनता का बोध करवाता है। 'इमोशनल रेप सिन्ड्रोमः हाऊ इ सरवाइव एण्ड एवॉइड' के रचनाकार डॉ. माइकल फॉक्स के अनुसार, "इमोशनल रेप जिसमें किसी व्यक्ति की भावनाओं, प्यार और सम्मान को ठेस पहुँचाई जाती है, एक बहुत बड़ी और गहराई तक पहुँची हुई बीमारी है। इमोशनल रेपिस्ट वह व्यक्ति होता है जिसे आप प्यार करती हैं, पर वह आपको हमेशा शर्मिन्दा महसूस करवाता है। अपनी इच्छाओं और खुशी के लिए आपको भावनात्मक रूप से ब्लैकमेल करता है"।

- *रचना पाराशर, तार-तार हुई भावनाएँ, (परिवार), राजस्थान पत्रिका, बुद्धवार, 21 मार्च, 2007, पृ. 1)*

इससे महिला अपना आत्मविश्वास खो देती है और अपनी जिन्दगी समाप्त समझने लगती है, जिसे फॉक्स 'पोस्ट ट्रोमैटिक रेप सिंड्राम' का लक्षण मानते हैं, जो कि सैक्सुअल रेप से अधिक घातक होता है। इन घातक स्थितियों का वर्णन आत्मकथाओं में उभरना लेखिकाओं के चेतनता का प्रतीक है। साथ ही उनकी निर्भिकता को दर्शाता है।

आत्मकथा 'शिकंजे का दर्द' में सुशीला टाकभौरे अपने पति की प्रताड़नाओं से सदैव दुखी रहीं। 'एक कहानी यह भी' में मन्नू भंडारी राजेन्द्र यादव से प्रेम-विवाह करके भी आजीवन उपेक्षित रहीं, वे राजेन्द्र जी से प्राप्त धोखा छद्म और ग़ैरजिम्मेदाराना हरकतों से तंग आकर अंततः अकेलेपन को चुनती हैं। 'अन्या से अनन्या' में प्रभा खेतान ने डॉक्टर से प्रेम कर जीवन भर क्षणिक अनुभवों के साथ-साथ अनेक प्रताड़नाएँ झेलती रहीं और अपने प्रेम को अंत तक निभाती हैं। तीनों ही आत्मकथाओं में की आत्मकथाकार कोई साधारण स्त्रियाँ नहीं हैं, उसके बावजूद भी वे प्रेम में लम्बे समय तक पीड़ा से जुड़ी रहीं अथवा पीड़ा में ही जीवन गुजार दीं।

इन प्रताड़नाओं का अंत यहीं नहीं होता, बल्कि यह निरंतर चलने वाली प्रक्रिया में परिवर्तित हो जाती है, जिसे स्त्रियाँ सहने की आदी बन जाती हैं अथवा विरोधी या ढ़ीठ बन जाती हैं। सुधा अरोड़ा द्वारा रचित कहानी 'अन्नपूर्णामंडल की आखिरी चिट्ठी' में नायिका अन्नपूर्णा के ऊपर हो रहे हर अत्याचार सत्ता के संस्कारों में बंधे उस अत्याचार की दास्तान है, जिसे औरत सिर्फ तकलीफ़ नहीं बल्कि अपनी क़िस्मत

समझकर स्वीकार कर लेती है । मैत्रेयी पुष्पा की 'फैसला' कहानी में नायिका बसुमतिया ग्राम प्रधान होते हुए भी प्रधानी का कोई भी फैसला स्वयं नहीं ले पातीसभी फैसल ,े उसके पति रनवीर द्वारा लिया जाता है । जब वह पति के बिना आज्ञा के गाँव में न्याय करने चली जाती है तब उसे अपने पति से खरीखोटी भी -– सुननी पड़ती है । रनवीर कहता है"कचहरी करने का इतना शौक था तो बाप से कहकर वकालत पढ़ ली होती ! बार...बार मना करने पर भी-!...

यह रोज दिन की नाटकबाजी-रात ! रोज की नौटंकी-! बताओ कब बन्द करोगी" ?

- *पुष्पा.14 .पृ .ललमनियाँ .मैत्रेयी ,*

यह कहानी ग्राम-पंचायत पर आधारित हैजहाँ महिला सीट होने के कारण उन्हें राजनीति में भाग , मौका तो मिलता है लेकिन शासन पुरुष ही करते हैं और जैसे ही औरत फैसला लेने लगती है उसे लेने का इसी तरह से शर्मिन्दगी महसूस करवाय ा जाता है । लेकिन बसुमतिया जैसी स्त्रियाँ मूक होकर अपने एक फैसले से कहानी का रूख मोड़ देती हैं।

'शाल्मली' ,(नासिरा शर्मा) 'कर्करेखा' (शशिप्रभा शास्त्री) 'शेषयात्रा' ,(उषा प्रियंवदा) 'तिनका तिनके पास' और (अनामिका) 'दस द्वारे का पींजरा'अना) मिका,('पतझड़ की आवाजें' ,(निरूपमा सेवती) बहू जुठाई (रमणिका गुप्ता)'यही सच है' ,(मन्नू भंडारी) 'कौनसी जमीन अपनी-'(सुधा ओम ढ़ींगरा) , 'न भेज्यो विदेस'(सुदर्शन प्रियदर्शिनी) , 'हवन' ,(सुषम वेदी) 'शाल्मली' ,(नासिरा शर्मा) 'कठगुलाब' (मृदुला गर्ग) बीच घनघोर आँधी से लड़ते हुए दिये -संग्रहों और उपन्यासों की नायिकाएँ मूक समुद्र के बीचो-आदि कहानी मानतीं । समाज उस मूक समुद्र की भाँति है बुझ कर भी जल जाती हैं और हार नहीं-जो बुझ ,के समान हैं 2015 ,अगस्त 15 जोको हुए मेरठ में लड़की के साथ छेड़खानी की घटना में घटित हैजिसमें लड़की को , गुंडों से बचाते हुए फौजी वेद मित्र चौधरी शहीद हो जाता है और लगभग डेढ़ सौ जनता मूक 15 लगभग होकर देखती रहती है। वैसे ही इन नायिकाओं की जिसने भी सहायता की वे अपमान के शिकार हुए अथवा नायिकाओं को स्वयं ही अपना रास्तातय करना पड़ा। कदाचित् सुनीता जैन की बात सत्य प्रतीत होती है –

"मैं नारी थी केवल
नारी होकर रोई"

- *जैन.70 .पृ .चौखट पर व उठो माधवी .सुनीता ,*

रमणिका गुप्ता की 'मैं आजाद हुई हूँ' ,'खूँटे' ममता कालिया की ,'खांटी घरेलू औरत' अनामिका का , 'अनुष्टुप' ,'बीजाक्षर' कात्यायनी का ,'इस पौरूषपूर्ण समय में' ,'जादू नहीं कविता' सुशीला टाकभौरे की , 'यह तुम भी जानो' गगन गिल की ,'एक दिन लौटेगी लड़की' सविता सिंह की ,'अपने जैसा जीवन'नेहा , शरद की'ख़ुदा से ख़ुद तक' व्यक्तिगत अनुभूतियों का दस्तावेज हैए जिसकी गहराइयों को नापने के लि , ,अथाह अतल समुद्र की अनुभूति होनी आवश्यक है ।

साहित्य और समाज के अंतर्संबंध का प्रत्यक्ष प्रमाण महिलाओं की आत्मकथाएँ हैंजिसमें न केवल , लेखिकाओं के संघर्षों की दास्तान है बल्कि वे समस्त स्त्रियों के लिए प्रेरणास्रोत भी है । आत्मकथा 'दस्तक जिन्दगी की' और 'मोड़ जिन्दगी का' में प्रतिभा अग्रवाल अपनी बिखरी जिन्दगी को नाट्य शोध संस्थान की स्थापना कर समेटती हैं । 'अन्या से अनन्या' में प्रभा खेतान डॉसर्राफ से प्रेम में लगातार मानसिक . प्रताड़ना झेलते हुए भी एक सफल बिजनेस वूमेन की भूमिका निभाती है । 'कस्तूरी कुण्डल बसे' में मैत्रेयी पुष्पा की माँ कस्तूरी स्वयं एक विद्रोही महिला थींवे नहीं चाहती थीं कि अपने जीवन में जो समस्याएँ , वही उनकी बेटी भी झेले । ,उन्होंने झेला है'गुडिया भीतर गुडिया' में मैत्रेयी वैवाहिक तथा साहित्यिक

संघर्षों के पश्चात् अपनी अस्मिता स्थापित करती हैं। 'लगता नहीं है दिल मेरा' में कृष्णा अग्निहोत्री ज़िन्दगी और परिवेश से टूटकर भी अपने अस्तित्व को मजबूत बनाने का प्रयास करती हैं। 'एक कहानी यह भी' में मन्नू भंडारी अपने पति से तलाक लेकर छद्मी वैवाहिक जीवन से मुक्ति पा लेती हैं। 'पिंजरे की मैना' में चन्द्रकिरण सौनरेक्सा अपने पति से प्राप्त धोखे के पश्चात् अलग होने का फैसला करती हैं और पति के करतूतों की शिकायत कर उसे सज़ा भी दिलवाने का प्रयास करती हैं। 'शिकंजे का दर्द' में सुशीला टाकभौरे जातिवाद के घृणित समाज से संघर्ष करते हुए पारिवारिक जीवन में अनेक कठिनाईयों से जूझते हुए एक लेखिका के रूप में अपना अस्तित्व स्थापित करती हैं।

अर्थात् स्त्री सबसे पहले साथ हुए व्यक्तिगत एवं सामाजिक विडंबनाओं को प्रस्तुत करती है। सुशीला टाकभौरे का कटाक्ष अनुप्रयोग के स्तर पर देखा जा सकता है -

"जब कुत्ता और कुतिया
एक दूसरे के पूरक हैं
तब कुत्ते को वफादार
कहने के साथ ही
चरित्र के नाम पर
'कुतिया' गाली क्यों दी जाती है" ?

- *टाकभौरे:21 .पृ .यह तुम भी जानो .सुशीला ,*

अथवा निर्मला पुतुल घर की तलाश करते हुए -

"अपनी कल्पना में हर रोज
एक ही समय में स्वयं को
हर बेचैन स्त्री तलाशती है
घर प्रेम और जाति से अलग
अपनी एक ऐसी जमीन
जो सिर्फ उसकी अपनी हो"

- *पुतुल.9 .पृ .अशोक सिंह .अनु .नगाड़े की तरह बजते शब्द .निमर्ला ,*

यह दर्द और बेचैनी महसूस करने वाला ही लिख सकता है। हाशिए पर खड़ा रचनाकार द्वारा रचित समाज के इन घटनाओं का वर्णन साहित्य में देखनेसुनने अथवा भोगने के पश्चात् हृदयंगम कर अपनी अनुभूतियों , के पृष्ठ पर कल्पना और यथार्थ के सम्मिश्रण के अनुसार ही सम्मुख होता है।

चयन के अंतर्गत लोकोक्तियों कहावतों और मुहावरों को भी देखा ,जा सकता है -
रमणिका गुप्ता की कविता में "झूठ की वैसाखियाँ खीसें निपोरने लगती हैं"

- *गुप्ता21 .पृ .खूंटे .रमणिका ,*

अथवा अनामिका की कविता में –

"कोई देखता है आँखें
और कोई दिखाता है –
आँखें ही नहीं ,जीभ तक दिखाई जाती हैं –
दिखाए जाते हैं अँगूठे बाज वक्त,
बाज़ वक्त खीसे निपोरकर

दाँत दिखाने का भी चलन पुराना है”

- *अनामिका63 .पृ .कवि ने कहा .*

स्त्रियों का गीत के साथ पुराना रिश्ता रहा हैयदा कदा दिखाई ही दे ,इसलिए वे गीत को भूल नहीं पातीं , – देता है इसलिए इनकी भाषा संगीतात्मक भी लगती हैं“लालीलाली रे दुलहनिया लाली डोलिया में-” –

- *अनामिका.179 .पृ .खुरदुरी हथेलियाँ .*

सुमित पीद्वारा .वी. अनामिका से लिए गए साक्षात्कार में वे कहती हैं ,“स्त्रीबोध -कविता का काल-दूसरे से विच्छिन्न करना असम्भव है । अपने पड़ोस-बोध से इस कदर जुड़ा हुआ है कि इन्हें एक-उसके स्थान प्रेतों और कल्पित द-स्थानीय भूत ,बड़े चरित्र-छोटे ,पहाड़-जंगल ,जंतु-जीव ,पौधे-के पेड़ेवों से भी पारम्परिक स्त्री का जुड़ाव इतना सघन इसलिए भी होता है कि गैया के खूँटे की तरह उसे एक जगह गाड़कर ही रखा जाता है । वह अपने आसपास की प्रकृति से ही बोलती। आसपास के हर अवयव की बतियाती है-इत ,मिथक ,स्थानीय कहावतें – आहट उसकी भाषा की चौकसी से पकड़ती हैिहाससाहित्य और -लोक , भाषा में-नैतिक भूगोल हर रंग में अपनी उपस्थिति दर्ज किए रहते हैं स्त्री” ।

- *पी ,.वी.सुमीत(साक्षात्कार) .अनामिका की कविताओं का संबोध्य .*

2. शब्द– सम्पदा के स्तर-

स्त्रियों की भाषा उनकी दैनिक दिनचर्या का हिस्सा है । वे नितप्रति प्रयोग की ज-ाने वाले घरेलू शब्दावलियों को अपनी शब्दसम्पदा में शामिल करती हैं। यह स्वाभाविक भी है क्योंकि अनुभव क्षेत्र के -शब्दावलियों में विस्तार व संकुचन निर्भर करता है । विस्तार व संकुचन तथा संवेदना की सघनता पर इसलिए कवयित्रियों अथवा लेखिकाओं की भाषा में विविधता दिखाई देती है। रमणिका गुप्ता के साहित्य में झारखंड के शब्द के साथ साथ कोलियरी खदानों में काम करने वाले मजदूरों की भाषाअनामिका के , मैत्रेयी ,शब्द के साथ घर में निरंतर प्रयोग किए जाने वाले सामानों से संबंधित शब्द साहित्य में मैथिली के पुष्पा के साहित्य मेंबुंदेलखंडी की शब्द की अधिकता देखी जा सकती है।

उदाहरण के लिए अनामिका की ‘सार्वजनिक चौका’ नामक कविता देखी जा सकती है -

“औरत नहीं थी! वह इंद्रधनुष थी ,
लाल नेलपॉलिश,पीली साड़ी ,
नीली अँगिया और चूड़ियाँ हरी,
लौंग झक सफेद और चमकीली हँसुली,
भूरी चमड़ीटिकुली , बैगनी –
इंद्रधनुष तक से कुछ ज्यादा रंगीन
थे उसके सपने भी !”

- (अनामिका ((सार्वजनिक चौका) 99 .पृ ,कवि ने कहा –

इन पंक्तियों में नेलपॉलिशटिकुली औरत की अपनी ,हँसुली ,लौंग ,हरी चूड़ियाँ ,अँगिया ,साड़ी , शब्दों का प्रयोग हुआ हैपीली सा ,नेलपॉलिश का लाल होना ,ड़ीचमकीली ,लौंग झक सफेद ,हरी चूड़ियाँ , जिसे हमारे परंपरागत संस्कारों ने ही ,हँसुली आदि सुहागन स्त्री को दर्शाता है तो भूरी चमड़ी सौंदर्य को है और उसे सुहागन स्त्री के लिए रूढ़ बनाते हुए सपनों का इंद्रधनुष से अधिक रंगीन होना के प्रदान किया रूप अधिकृत कर दिया हैजिसका अधिकार विधवाओं को नहीं है। चूंकि यह अंश सार्वजनिक चूल्हा कविता , इन पर लिखी गयी घुघनी बेचने वाली रमावती ना-पूरी कविता खेसारी की साग की कचरी ,से लिया गया है

मेहँदी लगाने जाया करती है और ,उबटन ,सुबह तेल – । जो हर रोज अन्य घरों में महिलाओं को सुबह उनके दुःख दर्द का राज अपने हृदय में संजोये आती है।-

तात्पर्य यह है कि स्त्री की शब्द ,आबरू ,खिचड़ी ,कोख ,सम्पदा बिस्तर की चादर मुचकना- ,रोटी ,कैसेरल ,कुहुकना ,बटुला ,कलछुल ,बेलन ,चौका ,सूई ,लीपना ,नेह बीरवा ,करधनी ,लाज ,चलआँ चूर ,चटनी ,चोटीमा ,ढीबरी ,पंखा ,भात ,गोहाल ,सुहागसेज ,जच्चाघर ,मसखरा ,कुंकुम ,स्वेटर ,कंघी , के अंतःसंबंध में नैहर उसकी जातीय स्मृति पर आधारित है। जो कि समाज और साहित्य ,खोंसना ,सुपेली इतिहास एक साथ स् ,संस्कार ,परंपरा ,दुख की बतिकही-एक सेतु बनाता है जिस पर स्त्री की सुखपष्ट दृष्टिगत होते हैं।

3. **शैली के स्तर पर -**

भोलानाथ तिवारी शैली की परिभाषा देते हुए कहते हैं –"शैली भाषिक अभिव्यक्ति का वह विशिष्ट ढंग है जो प्रयोक्ता के व्यक्तित्व विषयसाहित्यिक धारा तथा स्थान आदि से सम्बद्ध होता है ,काल ,विधा , ,और जो चयनविचलनअप्रस्तुत विधान आदि भाषिक सामान्य अभिव्यक्ति के लिए ,समानान्तरता , असुलभ उपकरणों एवं उनके संयोजन पर आधृत होता है"।

- *तिवारी.22 .पृ .शैलीविज्ञान .भोलानाथ ,*

जब प्रगतिवाद एवं प्रयोगवाद के समय कीर्ति चौधरीशकुन्त माथुर आदि कवयित्रियों ने पुल्लिंग , तब पितृसत्ता में हाहाकार मच गया और स्त्रियों पर नकल करने और चोरी का ,शैली में लिखना प्रारंभ किया एवं पुल्लिंग क आरोप लगाया जाने लगा। दरअसल हिन्दी का संसार स्त्रिलिंग े खाँचे में बँटे होने के कारण दोनों ही अपनी भाषा पर पहला अधिकार समझते हैं। यही कारण है कि पुरूष कभी स्त्रीलिंग के रूप में स्वयं को संबंधित नहीं करता जबकि स्त्रियाँ इस दायरे को लाँघने का प्रयास करती हैं। ,

शुरूआती दौर में स्त्री व साहित्य जगतलेखन दबे पाँ-में "मैं" शैली में कदम रखता है जिसमें आधी आबादी समाहित हो जाती है। अल्हड़पनसमास ,डगमगाते कदम से अब सशक्त रूप लेकर व्यास शैली , सरल सपाट ,बिम्बात्मक एवं प्रतीकात्मक शैली ,आलंकारिक शैली लाक्षणिक शैली ,सूत्रात्मक शैली ,शैली देने लग सहज शैली भी दिखाई ी है। इस पौरूषपूर्ण समय में यदि कात्यायनी कहती हैं –

" मैं अपनी पहचान तक जाना चाहती हूँ
अपनी आत्मा तक
अपनी अस्मिता तक जाना चाहती हूँ"

- *कात्यायनी64 .पृ .इस पौरूषपूर्ण समय में .*

अथवा निर्मला पुतुल नगाड़े की तरह बजते शब्द में लिखती हैं –

मैं स्वयं को स्वयं की दृष्टि से देखते"
मुक्त होना चाहती हूँ अपनी जाति से"

- *पुतुल .9 .पृ ,अशोक सिंह .अनु .नगाड़े की तरह बजते शब्द .निर्मला ,*

तो इसका सीधा अर्थ स्त्री जाति के इतिहास और उसकी अस्मिता से जुड़ी है। अब वह स्वयं को वर्चस्ववादी सत्ता के नज़रिए से नहीं देखना चाहती बल्कि इंसान बनकर जीना चाहती है।

सुशीला टाकभौरे कहती हैं –

"मैं अति को
विषमता को तोड़कर
सहृदयता जगाना चाहती हूँ

क्रौंचि की तरह
मैं जन्म देना चाहती हूँ
युग चेतना को"

- *टाकभौर.16 .पृ ,तुमने उसे कब पहचाना .सुशीला ,*

अर्थात् स्त्री अपनी चेतना के माध्यम से युग परिवर्तन करना चाहती है। लेकिन यहाँ सिर्फ मुक्ति के लिए छटपटाहट नहीं है बल्कि ये समानतास्वतंत्रता एवं सद्भावना के युग को भी जन्म देना चाहती है। ,
यदि स्त्रीकहीं भावुक-लेखन कहीं-ता के वशीभूत भी है-
रमणिका गुप्ता –

"पर अब और परदे नहीं डालूँगी।
नहीं ढँकूंगी शंका की जीवित लाशों को
विश्वासों के कफ़न से।
अब और नाटक नहीं रचूँगी।
जलते द्वारों पर बंदनवार नहीं लटकाऊँगी।
मुरदा दूल्हे को सेहरे नहीं पहनाउँगी।
फटी प्रीत को टांकूँगी भी नहीं
और ना ही सिलूंगी
टूटते रिश्तों में पैबन्द"।

- *गुप्ता.23-22 .पृ .खूंटे .रमणिका ,*

यह कविता व्यास शैली में हैअधिक फैलाव और भावों का दुहराव है। इसी प्रकार भावुकता के साथ ,
- दुहराव का परिचय सुशीला टाकभौरे की कविता में भी दृष्टिगत होता है

"मुझे अनन्त असीम दिगन्त चाहिए
छत का खुला आसमान नहीं
आसमान की खुली छत चाहिए
मुझे अनन्त आसमान चाहिए।"

- *टाकभौरे:25 .पृ .यह तुम भी जानो .सुशीला ,*

इस भावुकताहड़बड़ाहट और आक्रोश , का एक कारण स्त्री के साथ हो रहे दोयम दर्जे के व्यवहार भी है। उसे कानून में समानता और स्वतंत्रता तो प्राप्त है पर व्यक्तिगत ,आर्थिक ,सामाजिक ,पारिवारिक , राजनैतिक आदि स्तरों पर लगातार संघर्ष करना पड़ रहा है।समाज की बहुमूखी एवं संक्रमित संस्कृति में आज भी स्त्री बहुमूखी प्रतिभा के साथसाथ संक्रमित संस्कृति जी र-ही है। एक ओर वह स्वभाव से मर्यादा , वहीं दूसरी ओर पाश्चात्य प्रभावित ,रही है एकनिष्ठता की कसौटी पर खरे उतरने का प्रयास कर ,नैतिकता -संस्कृति को स्वेच्छा से स्वीकारती हुई नज़र आ रही है। एक तरफ प्रेम की एकनिष्ठता के कारण ऑनर कीलिंग की शिकार हो रही है या फिरअपने वैवाहिक और पारिवारिक संबंधों को मजबूत बनाने का प्रयास कर रही है तो दूसरी तरफ लीवविवाहेत्तर संबंध आदि से परहेज नहीं है। ,समलैंगिक ,रिलेशनशिप इन-बड़े लाभ को ठुकराती नज़र आ रही है वहीं दूसरी ओर -एक तरफ अपने आदर्शों और मूल्यों के खातीर बड़े व्यक्तिगत लाभ अथवा विवशतावश अपने आदर्शों और मूल्यों के साथ समझौता भी कर रही है। एक ओर वह सामाजिक विकृत्तियों से जीतोड लड़ कर अपनी अस्मिता स्थापित करने में जुटी हुई हैं तो दूसरी ओर -समयानुसार बदलाव को ही जीवन का उद्देश्य मान रही है। आज वह अपने पति को छोड़कर फेसबुक पर मिले मित्र से विवाह के लिए उसके घर पर भूख हड़ताल कर सकती हैको लोलुप बारातियों-घर आये दहेज , ,दामिनी रेप केस में न्याय के लिए सड़कों पर निकल सकती है ,लौटाकर अपने प्रेमी का हाथ थाम सकती है

तेजाब जैसे बर्बर घटना के पश्चात् अपने जीवन का हाथ दुबारा थाम सकती है। ये किसी सोची समझी योजना के तहत नहीं हो रहा अथवा सिर्फ संस्थागत संगठनों का ही परिणाम नहीं है बल्कि शिक्षा और साहित्य का अत्यंत गहरे उतरने वाला प्रभाव हैजो तत्काल नहीं दिखाई देता। शनैः शनैः वह मन और , धीरे हिम्मत देते हुए स्त्री-जीवन में घुलता है और धीरेको सबल बनाता है। पूनम तुषामड़ के शब्दों में -

"मैं तत्पर हूं
तोड़ने को वह हर मर्यादा
जो मुझे दे
स्त्री होने की सज़ा"

- *-मुक्ति आंदोलन पर केन्द्रित कविता विशेषांक-स्त्री ,हाशिए उलांघती स्त्री) युद्धरत् आम आदमी) – (नई पौधः आज़ादी के बाद की चौथी पीढ़ी .पूनम तुषामड़ – मैं चाहती हूँ .1संपा . (.156 .पृ .रमणिका गुप्ता*

वह स्त्री होने की सज़ा को खत्म करना चाहती है स्त्रीत्व को नहीं। वह वर्चस्ववादी मानसिकता को , मदर ,सावित्री बाई फूले ,झाँसी का रानी ,पुरुष को नहीं। वह रजिया सुल्तान ,समाप्त करना चाहती है मर्द या मर्दा ,कल्पना चावला आदि बनना चाहती है ,टेरेसानी नहीं। वह अपना घर चाहती हैकिसी का , द नहीं। वह अपना चहारदीवारी की क़ै ,पराया धन नहीं। वह खुले आसमान में विचरण करना चाहती है वस्तु नहीं। वह वर्चस्ववादी सत्ता में ,किसी का उपनाम नहीं। वह मानव बनना चाहती है ,नाम चाहती है स्वतंत्रता और सद्भावना ज ,समानताैसे प्रजात्रांतिक मूल्यों की आकांक्षाओंइच्छाओं के साथ कभी अकेले - इस विश्वास के साथ तय करती जा रही है कि एक दिन वह तो कभी पूरे हुजूम के साथ निरंतर अपना रास्ता लपेट के सपाट और सहज शैली में जातीय स्मृति पर आधारित -सफल होगी। इसलिए वह बिना किसी लाग शब्द सम्पदाका प्रयोग करते हुए व्यावहारिक भाषा में अपनी बात कहना पसन्द करती है ताकि प्रत्येक व्यक्ति तक उसकी आवाज पहुँच सके।

निलेश रघुवंशी की हाशिए पर खडे प्रत्येक व्यक्ति की चिंता और समाज से प्रश्न लाजमी है -

धार्मिक उन्माद और बर्बर हमले बने पहचान इक्कीसवीं सदी के
बदा था इक्कीसवीं सदी की किस्मत में
मरते जाना हर दिन बेगुनाह लोगों का
हज़ार बरसों पीछे ढकेलने का षड़यंत्र ! आखिर किया किसने ?
किसने ? किसने ढकेला जीवन के बुनियादी हकों को हाशिए पर ?
क्या सचमुच
इक्कीसवीं सदी उन्माद और युद्दोन्माद की सदी होगी या
होगी उजड़ते संसार में हरी पत्ती की तरह" ?1

- *रघुवंशी.61.पृ .पानी का स्वाद .निलेश ,*

शुरूआती दौर और अब तक के स्त्रीलेखन सफ़र में काफी बदलाव आया है। चिंतन में गहनता और - यही कारण है कि स्त्रियों कदाचित ,शैली में परिपक्वता सुरक्षित महसूस करने तथा स्थायित्व के बाद आता है शैली में अब परिपक्वता आ गई है।-की भाषा

निष्कर्ष : बदलते समय के साथ समाज में स्त्रियों का दायरा विस्तृत हुआ हैइसलिए साहित्य में भी , शैली में परिपक्वता देखी जा सकती है ।-साथ उसकी भाषा-स्त्रियों की भागीदारी बढ़ने के साथ संरचना पर आधारित मनोसामाजिक स्त्रीभाषा में संवेदना और मुद्दे अधिक गझिन हुए हैं। अब लेखन में वे -शैली तथा संवेदनाओं के प्रति सचेत हो गई हैं।-पूर्वाग्रह से ग्रसित अवधारणाओं को तोड़ते अपनी भाषा

<u>संदर्भ – ग्रंथ-</u>

-

1. वंशीप्रका .2006 .सं .संत मीराबाई और उनकी पदावली .संपा ,बलदेव ,: परमेश्वरी प्रकाशन , .दिल्ली
2. निरालाप्रका .2012 .सं .रामविलास शर्मा .संपा .रागविराग .सूर्यकांत त्रिपाठी ,: लोकभारती प्रकाशन.इलाहाबाद ,
3. शर्मा20 .सं .हिन्दी साहित्य युग और प्रवृत्तियाँ .शिवकुमार ,वाँप्रका .2012 ,: अशोक प्रकाशन , .दिल्ली
4. तुलसीदासश्रीरामचरितमा .नस ,प्रथम .सं .हनुमान दास पोद्दार ,टीकाकार .(सटीक ,मझला) प्रका .2061: गीत प्रेस, गोरखपुर.
5. ढ़ींगराप्रका .2010 ,प्रथम .सं .सी जमीन अपनी-कौन .सुधा ओम ,: भावना प्रकाशन .दिल्ली ,
6. गिल .2001 द्वितीय .सं .एक दिन लौटेगी लड़की .गगन ,प्रका: राजकमल प्रकाशन .नई दिल्ली ,
7. गुप्ताप्रका .1980 ,प्रथम .खूंटे .रमणिका ,: पराग नगर.दिल्ली ,
8. कालियाप्रका .2004 .सं .खांटी घरेलू औरत .ममता ,: वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली.
9. शरदप्रका .2001 .सं .ख़ुदा से ख़ुद तक .नेहा ,: वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली.
10. गर्गप्रका .कठगुलाब .मृदुला ,: ज्ञानपीठ प्रकाशन, दिल्ली.
11. ढींगरासी-कौन .सुधा ओम , जमीन अपनीप्रका .2010 ,प्रथम .सं .: भावना प्रकाशन.दिल्ली ,
12. पुष्पाप्रका .2010 .सं .ललमनियाँ .मैत्रेयी ,: किताबघर प्रकाशन.नई दिल्ली ,
13. जैनप्रका .2006 .सं .चौखट पर व उठो माधवी .सुनीता ,: मेधा बुक्स.दिल्ली ,
14. टाकभौरेयह त .सुशीला ,ुम भी जानोप्रका .1994 ,प्रथम .सं .: शरद प्रकाशन .नागपुर ,
15. पुतुलप्रका .2005 .सं .अशोक सिंह .अनु .नगाड़े की तरह बजते शब्द .निमर्ला ,:भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली.
16. अनामिका .दिल्ली ,किताबघर प्रकाशन .प्रका .2008 ,प्रथम .सं .कवि ने कहा .
17. अनामिका .कविता में औरत ,संप्रका .2007 .जन ,दूसरा .: इतिहास बोध प्रकाशन, इलाहाबाद.
18. टाकभौरप्रका .1995 ,प्रथम .सं .तुमने उसे कब पहचाना .सुशीला ,: शरद प्रकाशन .नागपुर ,
19. कात्यायनी.नई दिल्ली ,वाणी प्रकाशन .1999 ,प्रथम .सं .इस पौरूषपूर्ण समय में .
20. रघुवंशी .2004 .सं .पानी का स्वाद .निलेश ,प्रका: किताबघर प्रकाशन.दिल्ली ,
21. तिवारीप्रका .1997 .सं .शैलीविज्ञान .भोलानाथ ,: शब्दकार, दिल्ली.

22. पचौरीप्रका .2000 ,प्रथम .सं .देह के विमर्श-स्त्री .सुधीश ,: आत्माराम एंड संस ,कश्मीरी गेट , .दिल्ली
23. यादवसंसार-कवयित्रियों का रचना उत्तरशती की .रेनू ,: उभरते जीवन (प्रबंध-शोध) .मूल्य-.2011 .हैदराबाद ,मौलाना आज़ाद नेशनल ऊर्दू विश्विद्यालय
24. पी ,.वी.सुमीत .हैदराबाद विश्वविद्यालय (प्रबंध-शोध) .अनामिका की कविताओं का संबोध्य . 2008
25. संवेद .2009 अक्टूबर .स्त्री का भाषा घर .
26. गृहलक्ष्मी .2008 .पृ ,जनवरी .पाः तबस्सुमसं .
27. राजस्थान पत्रिका 21 ,बुद्धवार .मार्च2007 ,
28. युद्धरत् आम आदमी .(1-मुक्ति आंदोलन पर केन्द्रित कविता विशेषांक-स्त्री ,हाशिए उलांघती स्त्री) .रमणिका गुप्ता .संपा
29. https://www.goodreads.com/quotes/469784-quiet-people-have-the-loudest-minds
30. http://www.milansagar.com/kobi/kobi-subhadrakumchauhan.html

****